Hindu Marriage Act 1955 (Hindi) हिन्दू विवाह अधिनियम

No: **25**, Dated: **May, 18 1955**

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955

(1955 का अधिनियम संख्या 25) [18 मई 1955]

प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम और विस्तार–

(1) यह अधिनियम हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 कहलाया जा सकेगा।

(2) इसका विस्तार जम्मू और कश्मीर राज्य के सिवाय समस्त भारत पर है और जिन राज्य-क्षेत्रों पर कि इस अधिनियम का विस्तार है, उन राज्य-क्षेत्रों में अधिवासी उन हिन्दुओं को भी यह लागू है जो उक्त राज्यक्षेत्रों के बाहर हैं।

2. अधिनियम का लागू होना-

(1) यह अधिनियम -

(क) वीरशैव, लिंगायत, ब्राह्म, प्रार्थना या आर्य-समाज के अनुयायियों के सहित ऐसे किसी व्यक्ति को लागू है जो कि हिन्दू धर्म के रूपों के विकासों में से किसी के नाते धर्म से हिन्दू हैं;

(ख) ऐसे किसी व्यक्ति को लागू है जो कि धर्म से बौद्ध, जैन या सिक्ख हैं; और

(ग) जब तक कि उन राज्य-क्षेत्रों में जिन पर कि इस अधिनियम का विस्तार है, अधिवासित ऐसे किसी अन्य व्यक्ति के बारे में जो कि धर्म से मुसलमान, ईसाई, पारसी या यहूदी नहीं है, यह सिद्ध नहीं कर दिया जाता कि यदि यह अधिनियम पारित न किया गया होता तो वह ऐसी किसी बात के बारे में, जिसके लिये इसमें व्यवस्था की गई है, हिन्दू विधि द्वारा या उस विधि की भागरूप किसी रूढ़ि या प्रथा द्वारा शासित नहीं होता, ऐसे अन्य व्यक्ति को भी लागू है।

स्पष्टीकरण — निम्न व्यक्ति अर्थात् :-

(क) ऐसा कोई बालक चाहे वह औरस हो या जारज जिसके दोनों जनकों में से एक धर्म से हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख हों;

(ख) ऐसा बालक चाहे वह औरस हो या जारज जिसके दोनों जनकों में से एक धर्म से हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख है और जिसका कि लालन-पालन उस आदिम जाति, समुदाय, समूह या परिवार के सदस्य के रूप में किया गया है जिसका कि ऐसा जनक है या था; और

(ग) ऐसा कोई व्यक्ति जिसने हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख धर्म ग्रहण किया है, पुनर्ग्रहण किया है; यथास्थिति धर्म से हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख है।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई बात संविधान के अनुच्छेद 366 के खण्ड (25) के अर्थों के अन्दर वाली किसी अनुसूचित आदिम जाति के सदस्यों को तब तक लागू न होगी जब तक कि केन्द्रीय सरकार राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा अन्यथा निर्दिष्ट न करे।

(3) इस अधिनियम के किसी प्रभाव से हिन्दू पद का ऐसे अर्थ लगाया जायगा मानो कि इसके अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति है जो कि यद्यपि धर्म से हिन्दू नहीं है तथापि ऐसा व्यक्ति है जिसे कि यह अधिनियम इस धारा में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के बल से लागू होता है।

3. परिभाषाएँ - इस अधिनियम में जब तक कि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो -

(क) “रूढ़ि ” और “प्रथा” पदों से ऐसा कोई नियम अभिप्रेत है जिसे कि लम्बे समय के लिए लगातार और एकरूपता से अनुपालित किये जाने के कारण किसी स्थानीय क्षेत्र, आदिम जाति, समुदाय, समूह या परिवार के हिन्दुओं में विधि का बल अभिप्राप्त हो गया है : परन्तु यह तब जब कि यह नियम निश्चित हो, और अयुक्तियुक्त या लोक नीति के विरुद्ध न हो और, परन्तु यह और भी कि ऐसे नियम की अवस्था में जो कि एक ही परिवार को लागू है, परिवार द्वारा उनका अस्तित्व भंग नहीं कर दिया गया हो।

(ख) “जिला न्यायालय” से ऐसे किसी क्षेत्र में, जिसके लिए नगर व्यवहार न्यायालय है, वह न्यायालय और किसी अन्य क्षेत्राधिकार वाला प्रधान व्यवहार न्यायालय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत ऐसा कोई अन्य व्यवहार न्यायालय है जिसे कि इस अधिनियम में जिन बातों के लिए व्यवस्था की गई है उनके बारे में क्षेत्राधिकार रखने वाले न्यायालय के रूप में राज्य सरकार द्वारा राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा उल्लिखित किया जाये।

(ग) “सगा” और ‘सौतेला 'कोई दो व्यक्ति एक-दूसरे के सगे नातेदार तब कहलाते हैं जब वे एक ही पूर्वज से उसकी एक पत्नी से जन्में हों, और सौतेले नातेदार तब कहलाते हैं जबकि वे एक ही पूर्वज से किन्तु उसकी भिन्न पत्नियों से जन्मे हों।

(घ) “सहोदर” दो व्यक्ति एक दूसरे के सहोदर नातेदार तब कहलाते हैं जबकि वे एक ही पूर्वजा से किन्तु उसके भिन्न पतियों से जन्मे हों।

स्पष्टीकरण - खण्ड (ग) और (घ) में 'पूर्वज' पद के अन्तर्गत पिता है और 'पूर्वजा' के अन्तर्गत माता है।
(ड.) “विहित” से इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है।

(च)

(i) किसी व्यक्ति के प्रति निर्देश से सपिंड नातेदारी का विस्तार माता से ऊपर वाली परम्परा में तीसरी पीढ़ी तक (जिसके अन्तर्गत तीसरी पीढ़ी भी है) और पिता के ऊपर वाली परम्परा में पाँचवीं पीढ़ी तक (जिनके अन्तर्गत पाँचवीं पीढ़ी भी है), प्रत्येक अवस्था में परम्परा सम्पृक्त व्यक्ति से ऊपर गिनी जायेगी जिसे कि पहली पीढ़ी का गिना जाता है;

(ii) यदि दो व्यक्तियों में से एक सपिण्ड की नातेदारी की सीमाओं के भीतर दूसरे का परम्परागत अग्रपुरुष है, या यदि उसका ऐसा एक ही परम्परागत अग्रपुरुष है, जो कि एक-दूसरे के प्रति सपिण्ड नातेदार की सीमाओं के भीतर है; तो ऐसे दो व्यक्तियों के बारे में कहा जाता है कि वे एक-दूसरे के सपिण्ड हैं।

(छ) “प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्रियाँ” - यदि दो व्यक्तियों में से सान्निध्य:-

(i) एक-दूसरे का परम्परागत अग्रपुरुष है, या

(ii) एक-दूसरे का परम्परागत अग्रपुरुष या वंशज की पत्नी या पति है; या

(iii) एक-दूसरे के भाई की या पिता या माता के भाई की, या पितामह या मातामह या पितामही या मातामही के भाई की पत्नी है; या

(iv) भाई और बहिन, चाचा और भतीजी, चाची या भतीजा या भाई और बहिन की या दो भाइयों या दो बहिनों की सन्तति हैं, तो उनके बारे में कहा जाता है कि वे 'प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्रियों' के अन्दर हैं।

स्पस्टीकरण - खण्ड (च) और (छ) के प्रयोजनों के लिये 'नातेदार' के अन्तर्गत –

(i) सभी नातेदारी के समान ही सौतेली या सहोदर नातेदारी भी है;

(ii) औरस नातेदारी के समान ही जारज नातेदारी भी है;

(iii) रक्तजन्य नातेदारी के समान ही दत्तक नातेदारी भी है;

और उन खण्डों में नातेदारी सम्बन्धी पदों का अर्थ तदनुकूल लगाया जायेगा।

4. अधिनियम का सर्वोपरि प्रभाव- इस अधिनियम में अन्यथा अभिव्यक्तरूपेण उपबन्धित को छोडकर:-

(क) हिन्दू विधि का कोई पाठ, नियम या निर्वचन या उस विधि की भागरूपी रूढ़ि या प्रथा जो कि इस अधिनियम के प्रारम्भ होने से अव्यवहितपूर्व प्रवृत्त थी, ऐसी किसी बात के बारे में प्रभावशून्य हो जायेगी जिसके लिये इस अधिनियम द्वारा उपबन्ध किया गया है।

(ख) कोई अन्य विधि जो कि इस अधिनियम के प्रारम्भ से अव्यवहितपूर्व प्रवृत्त थी, वहाँ तक प्रभावशून्य हो जायेगी जहाँ तक कि वह इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट उपबन्धों में से किसी से असंगत

है।

हिन्दू विवाह

5. हिन्दू विवाह के लिए शर्तें - दो हिन्दुओं के बीच विवाह उस सूरत में अनुष्ठित किया जा सकेगा जिसमें कि निम्न शर्तें पूरी की जाती हों, अर्थात् –

(1) दोनों पक्षकारों में से किसी का पति या पत्नी विवाह के समय जीवित नहीं है।

(ii) विवाह के समय दोनों पक्षकारों में से कोई पक्षकार -

(क) चित्त विकृति के परिणामस्वरूप विधिमान्य सम्मति देने में असमर्थ न हो; या

(ख) विधिमान्य सम्मति देने में समर्थ होने पर भी इस प्रकार के या इस हद तक मानसिक विकार से ग्रस्त न हो कि वह विवाह और सन्तानोत्पति के अयोग्य हो; या

(ग) उसे उन्मत्तता का दौरा बार-बार पड़ता हो।

(iii) वर ने 21 वर्ष की आयु और वधू ने 18 वर्ष की आयु विवाह के समय पूरी कर ली है;

(iv) जब कि उन दोनों में से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो, तब पक्षकार प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्रियों के भीतर नहीं हैं;

(v) जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो तब पक्षकार एक-दूसरे के सपिण्ड नहीं हैं।

(vi) [*****]

6. विवाहार्थ संरक्षकता - [* * *]

7. हिन्दू विवाह के लिए संस्कार-

(1) हिन्दू विवाह उसमें के पक्षकारों में से किसी के रूढ़िगत आचारों और संस्कारों के अनुरूप अनुठित किया जा सकेगा।

(2) जहाँ कि ऐसे आचार और संस्कारों के अन्तर्गत सप्तपदी है (अर्थात् अग्नि के समक्ष वर और वधू को संयुक्त सात पद लेना है) वह विवाह पूरा और बाध्यकर तब हो जाता है जबकि सातवाँ पद पूरा किया जाता है |

8. हिन्दू विवाहों का रजिस्ट्रीकरण -

(1) राज्य सरकार हिन्दू-विवाहों की सिद्धि को सुकर करने के प्रयोजन के लिए यह उपबन्धित करने वाले नियम बना सकेगी कि ऐसे किसी विवाह के पक्षकार अपने विवाह से सम्बद्ध विशिष्टयाँ इस प्रयोजन के लिए रखे जाने वाले हिन्दू-विवाह रजिस्टर में ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहकर जैसी कि विहित की जायें, प्रविष्ट कर सकेंगे।

(2) यदि राज्य सरकार की यह राय है कि ऐसा करना आवश्यक या इष्टकर है तो यह उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी यह उपबन्ध कर सकेगी कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट विशिष्टयों को प्रविष्ट करना उस राज्य में या उसके किसी भाग में या तो सब अवस्थाओं में या ऐसी अवस्थाओं में जैसी कि उल्लिखित की जायें, अनिवार्य होगा और जहाँ कि ऐसा कोई निर्देश निकाला गया है, वहाँ इस निमित्त बनाये गये किसी नियम का उल्लंघन करने वाला कोई व्यक्ति जुर्माने से जो कि 25 रुपये तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा।

(3) इस धारा के अधीन बनाये गये सब नियम अपने बनाये जाने के यथाशक्य शीघ्र पश्चात् राज्य विधान मण्डल के समक्ष रखे जायेंगे।

(4) हिन्दू-विवाह रजिस्टर सब युक्तियुक्त समयों पर निरीक्षण के लिए खुला रहेगा और उसमें अन्तर्विष्ट कथन साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होंगे और रजिस्ट्रार आवेदन किये जाने पर और अपने की विहित फीस की देनगियाँ किये जाने पर उसमें से प्रमाणित उद्धरण देगा।

(5) इस धारा में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी किसी हिन्दू-विवाह की मान्यता ऐसी प्रविष्टि करने में कार्यलोप के कारण किसी अनुरीति में प्रभावित न होगी।

दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन और न्यायिक पृथक्करण

9. दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन –

जबकि पति या पत्नी में से किसी ने युक्तियुक्त प्रतिहेतु के बिना दूसरे से अपना साहचर्य प्रत्याहत कर लिया है, तब परिवेदित पक्षकार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिये याचिका द्वारा आवेदन जिला न्यायालय में कर सकेगा और न्यायालय ऐसी याचिका में किये गये कथनों की सत्यता के बारे में और बात के बारे में आवेदन मंजूर करने का कोई वैध आधार नहीं है; अपना समाधान हो जाने पर तदनुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए आज्ञप्ति देगा।

स्पष्टीकरण - जहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या साहचर्य से प्रत्याहरण के लिए युक्तियुक्त प्रतिहेतु है, वहाँ युक्तियुक्त प्रतिहेतु साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होगा जिसने साहचर्य से प्रत्याहरण किया है।

10. न्यायिक पृथक्करण –

(1) विवाह के पक्षकारों में से कोई पक्षकार चाहे वह विवाह इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात् जिला न्यायालय की धारा 13 की उपधारा (1) में और पत्नी की दशा में उसी उपधारा (2) के अधीन विनिर्दिष्ट आधारों में से किसी ऐसे आधार पर, जिस पर विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी उपस्थापित की जा सकती थी न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिए प्रार्थना करते हुए अर्जी उपस्थापित कर सकेगा।

(2) जहाँ कि न्यायिक पृथक्करण के लिये आज्ञप्ति दे दी गई है, वहाँ याचिकादाता आगे के लिये इस आभार के अधीन होगा कि प्रत्युत्तरदाता के साथ सहवास करे, किन्तु यदि न्यायालय दोनों में से किसी पक्षकार द्वारा याचिका द्वारा आवेदन पर ऐसी याचिका में किये गये कथनों की सत्यता के बारे में अपना समाधान हो जाने पर वैसा करना न्याय संगत और युक्तियुक्त समझे तो वह आज्ञप्ति का विखंडन कर सकेगा।

विवाह की अकृतता और तलाक

11. शून्य विवाह - इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् अनुष्ठित किया गया यदि कोई विवाह धारा 5 के खण्ड (1), (4) और (5) में उल्लिखित शर्तों में से किसी एक का उल्लंघन करता है, तो वह अकृत और शून्य होगा और उसमें के किसी भी पक्षकार के द्वारा दूसरे पक्षकार के विरुद्ध पेश की गई याचिका पर अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा ऐसा घोषित किया जा सकेगा।

12. शून्यकरणीय विवाह –

(1) कोई विवाह भले ही वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व या पश्चात् अनुष्ठित किया गया है; निम्न आधारों में से किसी पर अर्थात्:

(क) कि प्रत्यर्थी की नपुंसकता के कारण विवाहोत्तर संभोग नहीं हुआ है; या

(ख) इस आधार पर कि विवाह धारा 5 के खण्ड (2) में उल्लिखित शर्तों के उल्लंघन में है; या

(ग) इस आधार पर कि याचिकादाता की सम्मति या जहाँ कि याचिकादाता के विवाहार्थ संरक्षक की सम्मति, धारा 5 के अनुसार बाल विवाह निरोधक (संशोधन) अधिनियम, 1978 (1978 का 2) के लागू होने के पूर्व थी वहाँ ऐसे संरक्षक की सम्मति बल या कर्म-काण्ड की प्रकृति या प्रत्यर्थी से सम्बन्धित किसी तात्विक तथ्य या परिस्थिति के बारे में कपट द्वारा अभिप्राप्त की गई थी, या

(घ) इस आधार पर कि प्रत्युत्तरदात्री विवाह के समय याचिकादाता से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा गर्भवती थी; शून्यकरणीय होगा और अकृतता की आज्ञप्ति द्वारा अकृत किया जा सकेगा।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी विवाह को अकृत करने के लिए कोई याचिका:

(क) उपधारा (1) के खण्ड (ग) में उल्लिखित आधार पर उस सूरत में ग्रहण न की जायेगी जिसमें कि -

(i) अर्जी, यथास्थिति, बल प्रयोग के प्रवर्तनहीन हो जाने या कपट का पता चल जाने के एकाधिक वर्ष पश्चात् दी जाए; या

(ii) अर्जीदार, यथास्थिति, बल प्रयोग के प्रवर्तन हो जाने के या कपट का पता चल जाने के पश्चात् विवाह के दूसरे पक्षकार के साथ अपनी पूर्ण सहमति से पति या पत्नी के रूप में रहा या रही है;

(ख) उपधारा (1) के खण्ड (घ) में उल्लिखित आधार पर तब तक ग्रहण न की जायेगी जब तक कि न्यायालय का समाधान नहीं हो जाता है -

(i) कि याचिकादाता अभिकथित तथ्यों से विवाह के समय अनभिज्ञ था;

(ii) कि इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठित विवाहों की अवस्था में कार्यवाहियाँ ऐसे प्रारम्भ के एक वर्ष के भीतर और ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् अनुष्ठित विवाहों की अवस्था में विवाह की तारीख से एक वर्ष के भीतर संस्थित कर दी गई हैं; और

(iii) कि याचिकादाता की सम्मति से वैवाहिक सम्भोग उक्त आधार के अस्तित्व का पता याचिकादाता को चल जाने के दिन से नहीं हुआ है।

13. तलाक-

(1) कोई विवाह, भले वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व या पश्चात् अनुष्ठित हुआ हो, या तो पति या पत्नी पेश की गयी याचिका पर तलाक की आज्ञप्ति द्वारा एक आधार पर भंग किया जा सकता है कि -

(i) दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठान के पश्चात् अपनी पत्नी या अपने पति से भिन्न किसी व्यक्ति , के साथ स्वेच्छया मैथुन किया है; या

(i-क) विवाह के अनुष्ठान के पश्चात् अर्जीदार के साथ क्रूरता का बर्ताव किया है; या

(i-ख) अर्जी के उपस्थापन के ठीक पहले कम से कम दो वर्ष की कालावधि तक अर्जीदार को अभित्यक्त रखा है; या

(ii) दूसरा पक्षकार दूसरे धर्म को ग्रहण करने से हिन्दू होने से परिविरत हो गया है, या

(iii) दूसरा पक्षकार असाध्य रूप से विकृत-चित रहा है लगातार या आन्तरायिक रूप से इस किस्म के और इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि अर्जीदार से युक्ति-युक्त रूप से आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे।

स्पष्टीकरण -

(क) इस खण्ड में 'मानसिक विकार' अभिव्यक्ति से मानसिक बीमारी, मस्तिष्क का संरोध या अपूर्ण विकास, मनोविक्षेप विकार या मस्तिष्क का कोई अन्य विकार या अशक्तता अभिप्रेत है और इनके

अन्तर्गत विखंडित मनस्कता भी है;

(ख) 'मनोविक्षेप विषयक विकार' अभिव्यक्ति से मस्तिष्क का दीर्घ स्थायी विकार या अशक्तता (चाहे इसमें वृद्धि की अवसामान्यता हो या नहीं) अभिप्रेत है जिसके परिणामस्वरूप अन्य पक्षकार का आचरण असामान्य रूप से आक्रामक या गम्भीर रूप से अनुत्तरदायी हो जाता है और उसके लिये चिकित्सा उपचार अपेक्षित हो या नहीं, या किया जा सकता हो या नहीं, या

(iv) दूसरा पक्षकार याचिका पेश किये जाने से अव्यवहित उग्र और असाध्य कुष्ठ रोग से पीड़ित रहा है; या

(v) दूसरा पक्षकार याचिका पेश किये जाने से अव्यवहित यौन-रोग से पीड़ित रहा है; या

(vi) दूसरा पक्षकार किसी धार्मिक आश्रम में प्रवेश करके संसार का परित्याग कर चुका है; या

(vii) दूसरे पक्षकार के बारे में सात वर्ष या अधिक कालावधि में उन लोगों के द्वारा जिन्होंने दूसरे पक्षकार के बारे में, यदि वह जीवित होता तो स्वभावत: सुना होता, नहीं सुना गया है कि जीवित है।

स्पष्टीकरण -

इस उपधारा में 'अभित्यजन' पद से विवाह के दूसरे पक्षकार द्वारा अर्जीदार का युक्तियुक्त कारण के बिना और ऐसे पक्षकार की सम्मति के बिना या इच्छा के विरुद्ध अभित्यजन अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत विवाह के दूसरे पक्ष द्वारा अर्जीदार की जानबूझकर उपेक्षा भी है और इस पद के व्याकरणिक रूपभेद तथा सजातीय पदों के अर्थ तदनुसार किये जायेंगे।

(1-क) विवाह में का कोई भी पक्षकार चाहे वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के पहले अथवा पश्चात् अनुष्ठित हुआ हो, तलाक की आज्ञप्ति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए इस आधार पर कि

(i) विवाह के पक्षकारों के बीच में, इस कार्यवाही में जिसमें कि वे पक्षकार थे, न्यायिक पृथक्करण की आज्ञप्ति के पारित होने के पश्चात् एक वर्ष या उससे अधिक की कालावधि तक सहवास का पुनरारम्भ नहीं हुआ है; अथवा

(ii) विवाह के पक्षकारों के बीच में, उस कार्यवाही में जिसमें कि वे पक्षकार थे, दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की आज्ञप्ति के पारित होने के एक वर्ष पश्चात् एक या उससे अधिक की कालावधि तक, दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन नहीं हुआ है;

याचिका प्रस्तुत कर सकता है।

(2) पत्नी तलाक की आज्ञप्ति द्वारा अपने विवाह-भंग के लिए याचिका :-

(i) इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठित किसी विवाह की अवस्था में इस आधार पर उपस्थित कर सकेगी कि पति ने ऐसे प्रारम्भ के पूर्व फिर विवाह कर लिया है या पति की ऐसे प्रारम्भ से पूर्व विवाहित कोई दूसरी पत्नी याचिकादात्री के विवाह के अनुष्ठान के समय जीवित थी;

परन्तु यह तब जब कि दोनों अवस्थाओं में दूसरी पत्नी याचिका पेश किये जाने के समय जीवित हो; या

(ii) इस आधार पर पेश की जा सकेगी कि पति विवाह के अनुष्ठान के दिन से बलात्कार, गुदामैथुन या पशुगमन का दोषी हुआ है; या

(iii) कि हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 की धारा 18 के अधीन वाद में या दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन (या दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1898 की तत्स्थानी धारा 488 के अधीन) कार्यवाही में यथास्थिति, डिक्री या आदेश, पति के विरुद्ध पत्नी को भरण-पोषण देने के लिए इस बात के होते हुए भी पारित किया गया है कि वह अलग रहती थी और ऐसी डिक्री या आदेश के पारित किये जाने के समय से पक्षकारों में एक वर्ष या उससे अधिक के समय तक सहवास का पुनरारम्भ नहीं हुआ है; या

(iv) किसी स्त्री ने जिसका विवाह (चाहे विवाहोत्तर सम्भोग हुआ हो या नहीं) उस स्त्री के पन्द्रह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व अनुष्ठापित किया गया था और उसने पन्द्रह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् किन्तु अठारह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व विवाह का निराकरण कर दिया है।

स्पष्टीकरण — यह खण्ड लागू होगा चाहे विवाह, विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का 68) के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठापित किया गया हो या उसके पश्चात्।

13 – क. विवाह-विच्छेद कार्यवाहियों में प्रत्यर्थी को वैकल्पिक अनुतोष – विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी पर इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में, उस दशा को छोड़कर जहाँ और जिस हद तक अर्जी धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (ii), (vi) और (vii) में वर्णित आधारों पर है, यदि न्यायालय मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह न्यायोचित समझता है तो विवाह-विच्छेद की डिक्री के बजाय न्यायिक-पृथक्करण के लिए डिक्री पारित कर सकेगा।

13 - ख, पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद-

(1) इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए या दोनों पक्षकार मिलकर विवाह-विच्छेद की डिक्री विवाह के विघटन के लिए अर्जी जिला न्यायालय में, चाहे ऐसा विवाह, विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठापित किया गया हो चाहे उसके पश्चात् इस आधार पर पेश कर सकेंगे कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं और वे एक साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गये हैं कि विवाह विघटित कर देना चाहिये।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट अर्जी के उपस्थापित किये जाने की तारीख से छः मास के पश्चात् और अठारह मास के भीतर दोनों पक्षकारों द्वारा किये गये प्रस्ताव पर, यदि इस बीच अजीं वापिस नहीं ले ली गई हो तो न्यायालय पक्षकारों को सुनने के पश्चात् और ऐसी जाँच, जैसी वह ठीक समझे, करने के पश्चात् अपना यह समाधान कर लेने पर कि विवाह अनुष्ठापित हुआ है और अर्जी में किये गये प्रकाशन सही हैं यह घोषणा करने वाली डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा।

14. विवाह के एक वर्ष के अन्दर तलाक के लिये कोई याचिका पेश न की जायगी -

(1) इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी जब तक आज्ञप्ति द्वारा विवाह के भंग के लिए याचिका की तारीख जब तक कि उस विवाह की तारीख से अर्जी के उपस्थापन की तारीख तक एक वर्ष बीत न चुका हो, न्यायालय ऐसी याचिका को ग्रहण न करेगा :

परन्तु न्यायालय ऐसे नियमों के अनुसार जैसे कि उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त बनाये जायें, अपने से किये गये आवेदन पर याचिका को विवाह की तारीख से एक वर्ष व्यपगत होने से पहले पेश करने के लिये समनुज्ञा इस आधार पर दे सकेगा कि वह मामला याचिकादाता द्वारा असाधारण कष्ट भोगे जाने का या प्रत्युत्तरदाता की असाधारण दुराचारिता का है, किन्तु यदि न्यायालय को याचिका की सुनवाई पर यह प्रतीत होता है कि याचिकादाता ने याचिका पेश करने के लिए इजाजत किसी मिथ्या व्यपदेशन या मामले के प्रकार के सम्बन्ध में किसी मिथ्या व्यपदेशन या किसी छिपावट से अभिप्राप्त की थी तो यदि न्यायालय आज्ञप्ति दे तो इस शर्त के अधीन ऐसा कर सकेगा कि जब तक विवाह की तारीख से एक वर्ष का अवसान न हो जाय, तब तक वह आज्ञप्ति प्रभावशील न होगी या याचिका को ऐसी किसी याचिका पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना खारिज कर सकेगा जो कि उन्हीं या सारत: उन्हीं तथ्यों पर उक्त एक वर्ष के अवसान के पश्चात् दी जाये जैसे कि ऐसे खारिज की गई याचिका के समर्थन में अभिकथित किये गये हों।

(2) विवाह की तारीख से एक वर्ष के अवसान से पूर्व तलाक के लिए याचिका पेश करने की इजाजत के लिये इस धारा के अधीन किसी आवेदन का निपटारा करने में न्यायालय उस विवाह से हुई किसी संतति के हितों और इस बात को भी कि क्या पक्षकारों के बीच उत्त एक वर्ष के अवसान से पूर्व मेल-मिलाप की कोई युक्तियुक्त सम्भाव्यता है या नहीं, ध्यान में रखेगा।

15. कब तलाक-प्राप्त व्यक्ति पुन: विवाह कर सकेंगे - जबकि विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह विघटित कर दिया गया हो और या तो डिक्री के विरुद्ध अपील करने का कोई अधिकार ही न हो या यदि अपील का ऐसा अधिकार हो तो अपील करने के समय का कोई अपील उपस्थापित हुए बिना अवसान हो गया हो या अपील की गई हो किन्तु खारिज कर दी गई हो तब विवाह के किसी पक्षकार के लिए पुन:विवाह करना विधिपूर्ण होगा।

16. शून्य और शून्यकरणीय विवाहों के अपत्यों की धर्मजता -

(1) इस बात के होते हुए भी कि विवाह धारा 11 के अधीन अकृत और शून्य है, ऐसे विवाह का कोई अपत्य, जो विवाह के विधिमान्य होने की दशा में धर्मज होता, धर्मज होगा, चाहे ऐसे अपत्य का जन्म विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 के प्रारम्भ से पूर्व हुआ हो या पश्चात् और चाहे उस विवाह के सम्बन्ध में अकृतता की डिक्री इस अधिनियम के अधीन मन्जूर की गई हो या नहीं और चाहे वह विवाह इस अधिनियम के अधीन अर्जी से भिन्न आधार पर शून्य अभिनिर्धारित किया गया हो या नहीं।

(2) जहाँ धारा 12 के अधीन शून्यकरणीय विवाह के सम्बन्ध में अकृतता की डिक्री मन्जूर की जाती है, वहाँ डिक्री की जाने से पूर्व जनित या गर्भाहित ऐसा कोई अपत्य, जो यदि विवाह डिक्री की तारीख को अकृत किये जाने के बजाय विघटित किया गया होता तो विवाह के पक्षकारों का धर्मज अपत्य होता, अकृतता की डिक्री होते हुए भी उनका धर्मज अपत्य समझा जायेगा।

(3) उपधारा (1) या उपधारा (2) में की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जायेगा कि वह ऐसे विवाह के किसी अपत्य को, जो अकृत और शून्य है या जिसे धारा 12 के अधीन अकृतता की डिक्री द्वारा अकृत किया गया है, उसके माता-पिता से भिन्न किसी व्यक्ति की सम्पत्ति में या सम्पति के प्रति कोई अधिकार किसी ऐसी दशा में प्रदान करती है जिसमें कि यह अधिनियम पारित न किया गया होता तो वह अपत्य अपने माता-पिता का धर्मज अपत्य न होने के कारण ऐसा कोई अधिकार रखने या अजित करने में असमर्थ होता।

17. द्विविवाह के लिये दण्ड - यदि इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् दो हिन्दुओं के बीच अनुष्ठित किसी विवाह की तारीख में ऐसे विवाह में के किसी पक्षकार का पति या पत्नी जीवित था या थी तो ऐसा कोई विवाह शून्य होगा और भारतीय दण्ड संहिता (1860 का अधिनियम 45) की धारा 494 और 495 के उपबन्ध तदनुकूल लागू होंगे।

18. हिन्दू विवाह के लिये कुछ अन्य शर्तों के उल्लंघन के लिए दण्ड - प्रत्येक व्यक्ति जो कि धारा 5 के खण्ड (iii), (iv) तथा (V) में उल्लिखित शर्तों के उल्लंघन में विवाह इस अधिनियम के अधीन अनुष्ठित करा लेता है।

[1][(क) धारा 5 के खण्ड (iii) में उल्लिखित शर्तों के उल्लंघन की अवस्था में कठोर कारावास से जो दो वर्ष तक का हो सकेगा, या जुर्माने से, जो एक लाख रुपये तक हो सकेगा या दोनों से:] ।

(ख) धारा 5 के खण्ड (iv) या खण्ड (V) में उल्लिखित शर्तों के उल्लंघन की अवस्था में सादे कारावास से जो एक महीने तक का हो सकेगा, या जुर्माने से, जो एक हजार रुपये तक का हो सकेगा या दोनों से;

(ग) ****

क्षेत्राधिकार और प्रक्रिया

19. वह न्यायालय जिसमें अर्जी उपस्थापित की जायेगी - इस अधिनियम के अधीन हर अर्जी उस जिला न्यायालय के समक्ष उपस्थापित की जायेगी जिसकी साधारण आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर -

(i) विवाह का अनुष्ठापन हुआ था; या

(ii) प्रत्यर्थी, अर्जी के उपस्थापन के समय, निवास करता है; या

(iii) विवाह के पक्षकारों ने अंतिम बार एक साथ निवास किया था, या

(iii-क) पत्नी के अर्जीदार होने की दशा में, याचिका प्रस्तुत करने वाले दिनांक को, जहाँ वह निवास कर रही है; या

(iv) अर्जीदार के अर्जी पेश किए जाने के समय निवास कर रहा है, यह ऐसे मामले में, जिसमें प्रत्यर्थी उस समय ऐसे राज्यक्षेत्र के बाहर निवास कर रहा है जिस पर इस अधिनियम का विस्तार है। अथवा वह जीवित है या नहीं इसके बारे में सात वर्ष या उससे अधिक की कालावधि के । भीतर उन्होंने कुछ नहीं सुना है, जिन्होंने उसके बारे में, यदि वह जीवित होता तो, स्वाभाविकतया सुना होता ।

20. अर्जियों की अन्तर्वस्तु और सत्यापन -- (1) इस धारा के अधीन उपस्थापित हर अर्जी उन तथ्यों को जिन पर अनुतोष का दावा आधारित हो इतने स्पष्ट तौर पर कथित करेगी जितना उस मामले की प्रकृति अनुज्ञात करे और धारा 11 के अधीन अर्जी को छोड़कर ऐसी हर अर्जी यह भी कथित करेगी कि अर्जीदार और विवाह के दूसरे पक्ष के बीच कोई दुस्सन्धि नहीं है।

(2) इस अधिनियम के अधीन दी जाने वाली हर अर्जी में अन्तर्विष्ट कथन वाद पत्रों के सत्यापन के लिए विधि द्वारा अपेक्षित रीति से अर्जीदार या अन्य सक्षम व्यक्ति द्वारा सत्यापित किये जायेंगे और सुनवाई के समय साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होंगे।

21. 1908 के अधिनियम संख्यांक 5 का लागू होना -- इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट अन्य उपबन्धों के और उन नियमों के जो उच्च न्यायालय इस निमित्त बनाए, अध्यधीन यह है कि इस अधिनियम के अधीन सब कार्यवाहियाँ जहाँ तक हो सकेगा सिविल प्रकिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा विनियमित होगी।

21-क. कुछ मामलों में अर्जियों को अन्तरित करने की शक्ति -- (1) जहाँ

(क) इस अधिनियम के अधीन कोई अर्जी अधिकारिता रखने वाले जिला न्यायालय में विवाह के किसी पक्षकार द्वारा धारा 10 के अधीन न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिए या धारा 13 के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए प्रार्थना करते हुए पेश की गई है; और

(ख) उसके पश्चात् इस अधिनियम के अधीन कोई दूसरी अर्जी विवाह के दूसरे पक्षकार द्वारा किसी आधार पर धारा 10 के अधीन न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिये या धारा 13 के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए प्रार्थना करते हुए, चाहे उसी जिला न्यायालय में अथवा उसी राज्य के या किसी भिन्न राज्य के किसी भिन्न जिला न्यायालय में पेश की गई है, वहाँ ऐसी अर्जियों के सम्बन्ध में उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट रीति से कार्यवाही की जाएगी।

(2) ऐसे मामले में जिसे उपधारा (1) लागू होती है :

(क) यदि ऐसी अर्जियाँ एक ही जिला न्यायालय में पेश की जाती हैं तो दोनों अर्जियों का विचारण और उनकी सुनवाई उस जिला न्यायालय द्वारा एक साथ की जाएगी

(ख) यदि ऐसी अर्जियाँ भिन्न-भिन्न जिला न्यायालयों में पेश की जाती हैं तो बाद वाली पेश की गई अर्जी उस जिला न्यायालय को अन्तरित की जाएगी जिसमें पहले वाली अर्जी पेश की गई थी, और दोनों अर्जियों की सुनवाई और उनका निपटारा उस जिला न्यायालय द्वारा एक साथ किया

जाएगा जिसमें पहले वाली अर्जी पेश की गई थी ।

(3) ऐसे मामले में, जिसे उपधारा (2) को खण्ड (ख) लागू होता है, यथास्थिति, वह न्यायालय या सरकार, जो किसी वाद या कार्यवाही को उस जिला न्यायालय से, जिसमें बाद वाली अर्जी पेश की गई है, उस न्यायालय को जिसमें पहले वाली अर्जी लम्बित है, अन्तरित करने के लिये सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अधीन सक्षम है, ऐसी बाद वाली अर्जी का अन्तरण करने के लिए अपनी शक्तियों का वैसे ही प्रयोग करेगी मानो वह उक्त संहिता के अधीन ऐसा करने के लिए सशक्त की गई है ।

21-ख. इस अधिनियम के अधीन अर्जियों के विचारण और निपटारे से संबंधित विशेष उपबंध --

(1) इस अधिनियम के अधीन अर्जी का विचारण, जहाँ तक कि न्याय के हित से संगत रहते हुए उस विचारण के बारे में साध्य हो, दिन-प्रतिदिन तब तक निरन्तर चालू रहेगा जब तक कि वह समाप्त न हो जाए किन्तु उस दशा में नहीं जिसमें न्यायालय विचारण का अगले दिन से परे के लिये स्थगन करना उन कारणों से आवश्यक समझे जो लेखबद्ध किये जाएंगे ।

(2) इस अधिनियम के अधीन हर अर्जी का विचारण जहाँ तक संभव हो शीघ्र किया जाएगा और प्रत्यर्थी पर अर्जी की सूचना की तामील होने की तारीख से छह मास के अन्दर विचारण समाप्त करने का प्रयास किया जाएगा।

(3) इस अधिनियम के अधीन हर अपील की सुनवाई जहाँ तक सम्भव हो शीघ्र की जाएगी और प्रत्यर्थी पर अपील की सूचना की तामील होने की तारीख से तीन मास के अन्दर सुनवाई समाप्त करने का प्रयास किया जाएगा ।

21-ग. दस्तावेजी साक्ष्य -- किसी अधिनियमिति में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी यह है कि इस अधिनियम के अधीन अर्जी के विचारण को किसी कार्यवाही में कोई दस्तावेज साक्ष्य में इस आधार पर अग्राह्य नहीं होगी कि वह सम्यक् रूप से स्टाम्पित या रजिस्ट्रीकृत नहीं है ।

22. कार्यवाहियों का बन्द कमरे में होना और उन्हें मुद्रित या प्रकाशित न किया जाना --

(1) इस अधिनियम के अधीन हर कार्यवाही बन्द कमरे में की जाएगी और किसी व्यक्ति के लिये ऐसी किसी कार्यवाही के सम्बन्ध में किसी बात को मुद्रित या प्रकाशित करना विधिपूर्ण नहीं होगा किन्तु उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के उस निर्णय को छोड़कर जो उस न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा से मुद्रित या प्रकाशित किया गया है ।

(2) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के उपबन्धों के उल्लंघन में कोई बात मुद्रित या प्रकाशित करेगा तो वह जुर्माने से, जो एक हजार रुपये तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा ।

23 - कार्यवाहियों में डिक्री –

(1) यदि इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी कार्यवाही में, चाहे उसमें प्रतिरक्षा की गई हो या नहीं, न्यायालय का समाधान हो जाए कि

(क) अनुतोष अनुदत्त करने के आधारों में से कोई न कोई आधार विद्यमान है और अर्जीदार उन मामलों को छोड़कर, जिनमें उसके द्वारा धारा 5 के खंड (ii) के उपखण्ड (क), उपखंड (ख) या उपखण्ड (ग) में विनिर्दिष्ट आधार पर अनुतोष चाहा गया है। अनुतोष के प्रयोजन से अपने ही दोष या निर्योग्यता का किसी प्रकार फायदा नहीं उठा रहा या उठा रही है, और

(ख) जहाँ कि अर्जी का आधार धारा 13 की उपधारा (1) के खण्ड (i) में विनिर्दिष्ट आधार हो वहाँ न तो अर्जीदार परिवादित कार्य या कार्यों का किसी प्रकार से उपसाधक रहा है और न उसने उनका मौनानुमोदन या उपमर्षण किया है अथवा जहाँ कि अर्जी का आधार क्रूरता हो वहाँ अर्जीदार ने उस क्रूरता का किसी प्रकार उपमर्षण नहीं किया है, और

(खख) जब विवाह-विच्छेद पारस्परिक सम्मति के आधार पर चाहा गया है, और ऐसे सम्मति बल, कपट या असम्यक असर द्वारा अभिप्राप्त नहीं की गई है, और

(ग) अर्जी (जो धारा 11 के अधीन पेश की गई अर्जी नहीं है)] प्रत्यर्थी के साथ दस्संधि करके उपस्थापित या अभियोजित नहीं की जाती है, और

(घ) कार्यवाही संस्थित करने में कोई अनावश्यक या अनुचित विलम्ब नहीं हुआ है, और

(ङ) अनुतोष अनुदत्त न करने के लिए कोई अन्य वैध आधार नहीं है, तो ऐसी ही दशा में, किन्तु अन्यथा नहीं, न्यायालय तदनुसार ऐसा अनुतोष डिक्री कर देगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन कोई अनुतोष अनुदत्त करने के लिए अग्रसर होने के पूर्व यह न्यायालय का प्रथमतः कर्तव्य होगा कि वह ऐसी हर दशा में, जहाँ कि मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत रहते हुए ऐसा करना सम्भव हो, पक्षकारों के बीच मेल-मिलाप कराने का पूर्ण प्रयास करे परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसी कार्यवाही को लागू नहीं होगी जिसमें धारा 13 की उपधारा (1) के खण्ड (ii), खण्ड (iii), खण्ड (iv), खण्ड (v), खण्ड (vi) या खण्ड (vii) में विनिर्दिष्ट आधारों में से किसी आधार पर अनुतोष चाहा गया है ।

(3) ऐसा मेल-मिलाप कराने में न्यायालय की सहायता के प्रयोजन के लिए न्यायालय, यदि पक्षकार ऐसा चाहे तो या यदि न्यायालय ऐसा करना न्यायसंगत और उचित समझे, तो कार्यवाहियों को 15 दिन से अनधिक की युक्तियुक्त कालावधि के लिए स्थगित कर सकेगा और उस मामले को पक्षकारों द्वारा इस निमित्त नामित किसी व्यक्ति को या यदि पक्षकार कोई व्यक्ति नामित करने में असफल रहते हैं तो न्यायालय द्वारा नामनिर्देशित किसी व्यक्ति को इन निर्देशों के साथ निर्देशित कर सकेगा कि वह न्यायालय को इस बारे में रिपोर्ट दे कि मेल-मिलाप कराया जा सकता है या नहीं तथा करा दिया गया है या नहीं और न्यायालय कार्यवाही का निपटारा करने में ऐसी रिपोर्ट को सम्यक रूप से ध्यान में रखेगा

(4) ऐसे हर मामले में, जिसमें विवाह का विघटन विवाह-विच्छेद द्वारा होता है, डिक्री पारित करने वाला न्यायालय हर पक्षकार को उसकी प्रति मुफ्त देगा ।

23-क. विवाह-विच्छेद और अन्य कार्यवाहियों में प्रत्यर्थी को अनुतोष -- विवाह-विच्छेद या न्यायिक पृथक्करण या दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए किसी कार्यवाही में प्रत्यर्थी अर्जीदार के जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन के आधार पर चाहे गए अनुतोष का न केवल विरोध कर सकेगा बल्कि वह उस आधार पर इस अधिनियम के अधीन किसी अनुतोष के लिए प्रतिदावा भी कर सकेगा और यदि अर्जीदार का जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन साबित हो जाता है तो न्यायालय प्रत्यर्थी को इस अधिनियम के अधीन कोई ऐसा अनुतोष दे सकेगा जिसके लिए वह उस दशा में हकदार होता या होती जिसमें उसने उस आधार पर ऐसे अनुतोष की माँग करते हुए अर्जी उपस्थापित की होती ।

24. वाद लंबित रहते भरण-पोषण और कार्यवाहियों के व्यय -- जहाँ कि इस अधिनियम के अधीन के होने वाली किसी कार्यवाही में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि, यथास्थिति, पति या पत्नी की ऐसी कोई स्वतंत्र आय नहीं है जो उसके संभाल और कार्यवाही के आवश्यक व्ययों के लिए पर्याप्त हो वहाँ वह पति या पत्नी के आवेदन पर प्रत्यर्थी को यह आदेश दे सकेगा कि वह अर्जीदार को कार्यवाही में होने वाले व्यय तथा कार्यवाही के दौरान में प्रतिमास ऐसी राशि संदत्त करे जो अर्जीदार की अपनी आय तथा प्रत्यर्थी की आय को देखते हुए न्यायालय को युक्तियुक्त प्रतीत हो :

परन्तु कार्यवाही का व्यय और कार्यवाही के दौरान की ऐसी मासिक राशि के भुगतान के लिये के आवेदन को, यथासंभव पत्नी या पति जैसी स्थिति हो, पर नोटिस की तामील से साठ दिनों में निपटाएंगे ।

25. स्थायी निर्वाहिका और भरण-पोषण –

(1) इस अधिनियम के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर रहा कोई भी न्यायालय, डिक्री पारित करने के समय या उसके पश्चात् किसी भी समय, यथास्थिति, पति या पत्नी द्वारा इस प्रयोजन से किए गए आवेदन पर, यह आदेश दे सकेगा कि प्रत्यर्थी उसके भरण-पोषण और संभाल के लिए ऐसी कुल राशि या ऐसी मासिक अथवा कालिक राशि, जो प्रत्यर्थी की अपनी आय और अन्य सम्पत्ति को, यदि कोई हो, आवेदक या आवेदिका की आय और अन्य सम्पत्ति को तथा पक्षकारों के आचरण और मामले की अन्य परिस्थितियों को देखते हुए न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हो, आवेदक या आवेदिका के जीवन-काल से अनधिक अवधि के लिए संदत करे और ऐसा कोई भी संदाय यदि यह करना आवश्यक हो तो, प्रत्यर्थी की स्थावर सम्पत्ति पर भार द्वारा प्रतिभूत किया जा सकेगा।

(2) यदि न्यायालय का समाधान हो जाए कि उसके उपधारा (1) के अधीन आदेश करने के पश्चात् पक्षकारों में से किसी की भी परिस्थितियों में तब्दीली हो गई है तो वह किसी भी पक्षकार की प्रेरणा पर ऐसी रीति से जो न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हो ऐसे किसी आदेश में फेरफार कर सकेगा या उसे उपांतरित अथवा विखण्डित कर सकेगा।

(3) यदि न्यायालय का समाधान हो जाए कि उस पक्षकार ने जिसके पक्ष में इस धारा के अधीन कोई आदेश किया गया है, पुनर्विवाह कर लिया है या यदि ऐसा पक्षकार पत्नी है तो वह सतीव्रता नहीं रह गई है, या यदि ऐसा पक्षकार पति है तो उसने किसी स्त्री के साथ विवाहबाह्य मैथुन किया है तो वह दूसरे पक्षकार की प्रेरणा पर ऐसे किसी आदेश का ऐसी रीति में, जो न्यायालय न्यायसंगत समझे, परिवर्तित, उपांतरित या विखण्डित कर सकेगा।

26. अपत्यों की अभिरक्षा -- इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी भी कार्यवाही में न्यायालय अप्राप्तवय अपत्यों की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के बारे में, यथासंभव उनकी इच्छा के अनुकूल, समय-समय पर ऐसे आदेश पारित कर सकेगा और डिक्री में ऐसे उपबंध कर सकेगा जिन्हें वह न्यायसंगत और उचित समझे और डिक्री के पश्चात् इस प्रयोजन से अर्जी द्वारा किए गए आवेदन पर ऐसे अपत्य की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के बारे में समय-समय पर ऐसे आदेश और उपबंध कर सकेगा जो ऐसी डिक्री अभिप्राप्त करने की कार्यवाही के लंबित रहते ऐसी डिक्री या अन्तरिम आदेश द्वारा किए जा सकते थे और न्यायालय पूर्वतन किए गए किसी आदेश या उपबंध को समय-समय पर प्रतिसंहृत या निलंबित कर सकेगा, अथवा उसमें फेरफार कर सकेगा :

परंतु भरण-पोषण और अवयस्क बालकों की शिक्षा सम्बन्धित आवेदन, लम्बित कार्यवाही में डिक्री प्राप्त करने के, को, यथासंभव प्रत्यर्थी पर नोटिस की तामील से साठ दिनों में निपटाएंगे ।

27. सम्पत्ति का व्ययन -- इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी भी कार्यवाही में, न्यायालय ऐसी सम्पत्ति के बारे में, जो विवाह के अवसर पर या उनके आसपास उपहार में दी गई हो और संयुक्त पति और पत्नी दोनों की हो, डिक्री में ऐसे उपबन्ध कर सकेगा जिन्हें वह न्यायसंगत और उचित समझे ।

28. डिक्रियों और आदेशों की अपीलें –

(1) इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में न्यायालय द्वारा दी गई सभी डिक्रियाँ, उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए उसी प्रकार अपीलनीय होंगी जैसे न्यायालय द्वारा अपनी आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में दी गई डिक्री अपीलनीय होती है और ऐसी हर अपील उस न्यायालय में होगी जिसमें उस न्यायालय द्वारा अपनी आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में किए गए विनिश्चयों की अपीलें सामान्यतः होती हैं ।

(2) धारा 25 या धारा 26 के अधीन किसी कार्यवाही में न्यायालय द्वारा किए गए आदेश, उपधारा (3) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, तभी अपीलीय होंगे जब वे अन्तरिम आदेश न हों और ऐसी हर अपील उस न्यायालय में होगी जिसमें उस न्यायालय द्वारा अपनी आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में किए गए विनिश्चयों की अपीलें सामान्यतः होती हैं।

(3) केवल खर्चे के विषय में कोई अपील इस धारा के अधीन नहीं होगी ।

(4) इस धारा के अधीन हर अपील डिक्री या आदेश की तारीख से नब्बे दिन की कालावधि के अन्दर की जाएगी।

28-क. डिक्रियों और आदेशों का प्रवर्तन -- इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में न्यायालय द्वारा दी गई सभी डिक्रियों और आदेशों का प्रवर्तन उसी प्रकार किया जाएगा जिस प्रकार उस न्यायालय द्वारा अपनी आरंभिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में दी गई डिक्रियों और आदेशों का तत्समय प्रवर्तन किया जाता है ।

व्यावृतियाँ और निरसन

29. व्यावृतियाँ -- (1) इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व हिन्दुओं के बीच अनुष्ठापित ऐसा विवाह, जो अन्यथा विधिमान्य हो, केवल इस तथ्य के कारण अविधिमान्य या कभी अविधिमान्य रहा हुआ न समझा जाएगा कि उसके पक्षकार एक ही गोत्र या प्रवर के थे अथवा, विभिन्न धर्मों, जातियों या एक ही जाति की विभिन्न उपजातियों के थे ।

(2) इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात रूढ़ि से मान्यता प्राप्त या किसी विशेष अधिनियमिति द्वारा प्रदत्त किसी ऐसे अधिकार पर प्रभाव डालने वाली न समझी जाएगी जो किसी हिन्दू विवाह का, वह इस अधिनियम के प्रारंभ के चाहे पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात्, विघटन अभिप्राप्त करने का अधिकार हो ।

(3) इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन होने वाली किसी ऐसी कार्यवाही पर प्रभाव न डालेगी जो किसी विवाह को बातिल और शून्य घोषित करने के लिए या किसी विवाह को बातिल अथवा विघटित करने के लिए या न्यायिक पृथक्करण के लिए हो और इस अधिनियम के प्रारंभ पर लंबित हो और ऐसी कोई भी कार्यवाही चलती रहेगी और अवधारित की जाएगी मानो यह अधिनियम पारित ही न हुआ हो ।

(4) इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात विशेष विवाह अधिनियम, 1954 (1954 का 43) में अन्तर्विष्ट किसी ऐसे उपबंध पर प्रभाव न डालेगी जो हिन्दुओं के बीच उस अधिनियम के अधीन, इस अधिनियम के प्रारंभ के चाहे पूर्व चाहे पश्चात् अनुष्ठापित विवाहों के सम्बन्ध में हो ।

30. निरसन -- निरसन तथा संशोधन अधिनियम, 1960 (1960 का 58) की धारा 2 और प्रथम अनुसूची द्वारा (26-12-1960 से) निरसित